विंश खण्ड

श्री श्रीविजयादशमी-दिवस में भक्तों के संग में

प्रथम परिच्छेद

(ठाकुर श्रीरामकृष्ण श्यामपुकुर वाले घर में भक्तों के संग में)

श्री श्रीविजयादशमी। 18 अक्तूबर, 1885 ईसवी। ठाकुर श्रीरामकृष्ण श्यामपुकुर के घर में हैं। शरीर अस्वस्थ है। कलकत्ते में चिकित्सा कराने आए हुए हैं। भक्तगण सर्वदा ही रहते हैं, ठाकुर की सेवा करते हैं। भक्तों में से अभी किसी ने संसार-त्याग नहीं किया है— वे अपने-अपने घरों से यातायात करते हैं।

(सुरेन्द्र की भक्ति— 'माँ हृदय में रहें')

शीतकाल, प्रात: आठ का समय। ठाकुर अस्वस्थ, बिछौने पर बैठे हुए हैं। किन्तु पाँच वर्ष के बालक की न्यायीं, माँ के अतिरिक्त कुछ नहीं जानते। सुरेन्द्र आकर बैठ गए। नवगोपाल, मास्टर तथा और भी कोई-कोई उपस्थित हैं। सुरेन्द्र के घर में दुर्गा-पूजा हुई थी। ठाकुर जा नहीं पाए, भक्तों को प्रतिमा-दर्शन करने के लिए भेजा था। आज विजया है, तभी सुरेन्द्र का मन खराब हो रहा है।

सुरेन्द्र— घर से भाग आया हूँ।

श्रीरामकृष्ण *(मास्टर को)*— (माँ की प्रतिमा पानी में बहा दी गई है) वैसा

चाहे हो। माँ हृदय में रहें!

सुरेन्द्र 'माँ-माँ' करते हुए परमेश्वरी के उद्देश्य से कितनी ही बातें करने लगे।

ठाकुर सुरेन्द्र को देखते-देखते अश्रु-विसर्जन कर रहे हैं। मास्टर की ओर ताकते हुए गद्-गद् स्वर में कह रहे हैं, ''कैसी भक्ति है! आहा, इसकी कैसी भक्ति है!''

श्रीरामकृष्ण— कल सात-साढ़े सात के समय देखा तुम्हारा दालान! देव-प्रतिमाएँ रखी हैं। देखा, सब ज्योतिर्मय! यहाँ-वहाँ एक हुआ हुआ है। जैसे एक आलोक का स्रोत दो जगहों के बीच में बह रहा है!— यह घर और तुम लोगों का वह घर!

सुरेन्द्र— मैं तब देवी वाले दालान में माँ, माँ कहकर पुकार रहा था। दादाहर छोड़कर ऊपर चले गए थे। मन में उठा— माँ ने कहा है, 'मैं फिर दोबारा आऊँगी'।

(ठाकुर श्रीरामकृष्ण और भगवद्गीता)

अब ग्यारह बजने वाले हैं। ठाकुर ने पथ्य लिया। मणि कुल्ला करने के लिए (ठाकुर के) हाथ में जल दे रहे हैं।

श्रीरामकृष्ण *(मणि के प्रति)*— चने की दाल खाकर राखाल को असुख हो गया है। सात्त्विक आहार करना अच्छा है। तुमने गीता नहीं देखी? तुम गीता नहीं पढ़ते?

मणि— जी हाँ, युक्ताहार की बात है। सात्त्विक आहार, राजसिक आहार, तामसिक आहार। और सात्त्विक दया, राजसिक दया, तामसिक दया— सात्त्विक अहं इत्यादि सब हैं।

श्रीरामकृष्ण— गीता तुम्हारे पास है?

मणि— जी, है।

श्रीरामकृष्ण— उसमें सर्वशास्त्रों का सार है।

मणि— जी हाँ, ईश्वर को नाना प्रकार से देखने की बात है। आप जैसे कहते

हैं, नाना पथ द्वारा उनके पास जाना— ज्ञान, भक्ति, कर्म, ध्यान।

श्रीरामकृष्ण— कर्मयोग के क्या मायने हैं, जानते हो? सब कर्मों का फल भगवान में समर्पण करना।

मणि— जी, देखा है, उसमें है। कर्म को फिर तीन प्रकार से किया जा सकता है— यह है।

श्रीरामकृष्ण— किस-किस प्रकार से?

मणि— प्रथम, ज्ञान के लिए। द्वितीय, लोकशिक्षा के लिए। तृतीय, स्वभाव से।

ठाकुर आचमन के पश्चात् पान खा रहे हैं। मणि को मुख से पान-प्रसाद दिया।

द्वितीय परिच्छेद

(श्रीरामकृष्ण, सर हमफ्रे डेवी और अवतारवाद)

ठाकुर मास्टर के साथ डॉक्टर सरकार की बातें कर रहे हैं। पहले दिन ठाकुर का संवाद लेकर मास्टर डॉक्टर के पास गए थे।

श्रीरामकृष्ण— तुम्हारे साथ क्या-क्या बातें हुईं?

मास्टर— डॉक्टर के घर में बहुत-सी पुस्तकें हैं। मैं एक पुस्तक वहाँ पर बैठा-बैठा पढ़ रहा था। वही सब पढ़कर फिर डॉक्टर को सुनाने लगा। Sir Humphrey Devy (सर हमफ्रे डेवी) की पुस्तक थी। उसमें 'अवतार के प्रयोजन' की बात है।

श्रीरामकृष्ण— क्या? तुमने क्या बात बताई थी?

मास्टर— एक बात है, ईश्वर की वाणी मनुष्य के भीतर से न आए तो मनुष्य समझ नहीं सकता (Divine Truth must be made human Truth to be appreciated by us). जभी अवतार आदि का प्रयोजन है।

श्रीरामकृष्ण— वाह, यह समस्त तो सुन्दर बात है!

मास्टर— साहब ने उपमा दी है, जैसे सूर्य की ओर देखा नहीं जाता, किन्तु सूर्य का प्रकाश जहाँ पर पड़ता है (reflected rays), उस ओर देखा जाता है।

श्रीरामकृष्ण— सुन्दर बात है। और कुछ है?

मास्टर— और एक स्थान पर था, यथार्थ ज्ञान तो है विश्वास।

श्रीरामकृष्ण— यह तो बहुत अच्छी बात है। विश्वास हो तो सब हो ही गया।

मास्टर— साहब ने फिर स्वप्न में देखे थे रोमन देव-देवियाँ।

श्रीरामकृष्ण— ऐसी ये किताबें बन गई हैं? वे ही (ईश्वर) वहाँ पर काम कर रहे हैं। और कुछ बात हुई?

(श्रीरामकृष्ण और 'जगत का उपकार' अथवा कर्मयोग)

मास्टर— वे कहते हैं, जगत का उपकार करेंगे। तभी मैंने आपकी बात कही।

श्रीरामकृष्ण *(सहास्य)*— क्या बात?

मास्टर— शम्भुमल्लिक की बात। उसने आपसे कहा था, 'मेरी इच्छा है कि रुपये द्वारा कुछ हस्पताल-डिसपेन्सरी, स्कूल इत्यादि कर दूँ। इन से अनेकों का उपकार होगा!' आपने उनसे जो कहा था, वही कहा था, 'यदि ईश्वर सम्मुख आएँ, तो तुम क्या कहोगे— मुझे कुछ हस्पताल-डिस्पेन्सरी, स्कूल बनवा दो?' और एक बात कही थी।

श्रीरामकृष्ण— हाँ, वह श्रेणी अलग है, जो कर्म करने आती है। और क्या बात?

मास्टर— कहा था, काली-दर्शन यदि उद्देश्य हो, तो फिर रास्ते में केवल फकीर को विदा करने से क्या होगा? वरन् जिस किसी तरह से भी करके एक बार काली-दर्शन कर लो; उसके बाद जितने भी फकीर विदा करने की इच्छा हो, करो।

श्रीरामकृष्ण— और कुछ बात हुई?

(ठाकुर श्रीरामकृष्ण के भक्त और काम-जय)

मास्टर— आपके पास जो आते हैं— उनमें से बहुतों ने ही काम-जय कर लिया है, यही बात हुई। डॉक्टर ने तब कहा, 'मेरा भी काम-टाम उठ गया है, जानते हो!' मैंने कहा था, 'आप तो बड़े व्यक्ति हैं। आपने जो काम-जय कर लिया है, कहते हो, उसमें आश्चर्य नहीं। क्षुद्र प्राणियों तक का उनके पास रहने से इन्द्रिय-जय हो रहा है, यही आश्चर्य है।' फिर मैंने बताया, जो आपने गिरीश घोष को कहा था।

श्रीरामकृष्ण *(सहास्य)*— क्या कहा था?

मास्टर— आपने गिरीश घोष से कहा था, 'डॉक्टर तुम से आगे नहीं जा सका'। वही अवतार वाली बात।

श्रीरामकृष्ण— तुम अवतार की बात उससे (डॉक्टर से) कहना। अवतार— जो तारण करते हैं। वैसे दस अवतार हैं, चौबीस अवतार हैं, और फिर असंख्य अवतार हैं।

(मद्यपान क्रमशः बिलकुल त्याग)

मास्टर— (डॉक्टर) गिरीश घोष की बड़ी खबर लेते हैं। यही पूछते रहते हैं कि गिरीश घोष ने क्या बिलकुल मद छोड़ दी है? उसके ऊपर उनकी बड़ी नजर है।

श्रीरामकृष्ण— तुमने गिरीश घोष से वह बात कही थी?

मास्टर— जी हाँ, कही थी। और मद बिलकुल छोड़ देने की बात।

श्रीरामकृष्ण— वह क्या बोला?

मास्टर— वे बोले, तुम लोग जब कहते हो तब इसे ठाकुर की बात जान कर मानता हूँ, किन्तु फिर जोर देकर कोई बात नहीं कहूँगा।

श्रीरामकृष्ण *(आनन्द के साथ)*— कालीपद ने कहा है, उसने तो बिलकुल सब छोड़ दिया है।

तृतीय परिच्छेद

(नित्यलीला-योग)
(Identity of the Absolute or the Universal Ego and the phenomenal world)

तीसरा प्रहर हो गया है, डॉक्टर आए हैं। अमृत (डॉक्टर का पुत्र) और हेम डॉक्टर के संग आए हैं। नरेन्द्र आदि भक्तगण भी उपस्थित हैं।

ठाकुर अमृत से अकेले बातें कर रहे हैं। पूछते हैं,

'तुम्हारा क्या ध्यान होता है?'

और कह रहे हैं—

''ध्यान की अवस्था कैसी है, जानते हो? मन-तैल धारावत् हो जाता है। एक चिन्ता, ईश्वर की; अन्य कोई चिन्ता उसके भीतर नहीं आएगी?'

अब ठाकुर सबके संग बातें करते हैं।

श्रीरामकृष्ण *(डॉक्टर के प्रति)*— तुम्हारा बेटा अवतार नहीं मानता। वह अच्छी बात है। ना ही माने चाहे!

''तुम्हारा लड़का बढ़िया है। वैसा नहीं होगा? बम्बईया आम के वृक्ष पर क्या टोको आम होता है? उसका ईश्वर पर कैसा विश्वास है! जिसका ईश्वर पर मन है, वही तो है मनुष्य— और मनहोश। जिसको होश है, चैतन्य है, जो निश्चित जानता है कि ईश्वर सत्य है और सब अनित्य— वही है मनहोश। वह अवतार नहीं मानता, उसमें दोष क्या?

''ईश्वर। और यह सब जीव-जगत, उनका ऐश्वर्य!— यह मान लेने से ही हुआ। जैसे बड़ा व्यक्ति और उसका बाग।

''इस प्रकार कहते हैं, दस अवतार— चौबीस अवतार, और फिर असंख्य अवतार। जहाँ पर उनकी विशेष शक्ति का प्रकाश है, वहाँ पर ही अवतार है— वैसा तो मेरा मत है।

''और एक है— जो कुछ देखते हो, सब वे ही हुए हैं। जैसे बेल— बीज,

खोल और गूदा तीनों को मिलाकर एक। जिनका नित्य है, उनकी ही लीला है; जिनकी लीला, उनका ही नित्य। नित्य को छोड़कर केवल लीला समझ में नहीं आती। 'लीला है'— इसे छोड़ते–छोड़ते फिर नित्य में पहुँचा जाता है।

''अहंबुद्धि जब तक रहती है, तब तक लीला छोड़ी ही नहीं जाती। नेति–नेति करके ध्यानयोग के भीतर से नित्य में पहुँच सकता है। किन्तु कुछ छोड़ा जाने वाला नहीं है। जैसे मैंने कहा— बेल।''

डॉक्टर— ठीक बात है।

श्रीरामकृष्ण— कच निर्विकल्प–समाधि में थे। जब समाधि भंग हुई तो किसी ने पूछा, तुम अब क्या देखते हो? कच बोले, देख रहा हूँ कि जगत जैसे उनमें जुड़ा है। वे ही परिपूर्ण! जो कुछ देख रहा हूँ, सब वे ही हुए हैं। इसमें से कौन–सा फेंक दूँ, कौन–सा लूँ— निश्चय नहीं कर पा रहा।

''क्या है, जानते हो? नित्य और लीला–दर्शन करके दास–भाव में रहना। हनुमान ने साकार–निराकार–साक्षात्कार किया था। उसके बाद दास–भाव में— भक्त के भाव में थे।''

मणि *(स्वगत)*— नित्य और लीला— दोनों ही लेने होंगे। जर्मनी में वेदान्त जाने की अवधि से यूरोपीय पण्डितों का किसी–किसी का यही मत है। किन्तु ठाकुर कहते हैं, सब त्याग— कामिनी–काञ्चन–त्याग बिना हुए नित्य, लीला का साक्षात्कार नहीं होता। ठीक त्याग। सम्पूर्ण अनासक्ति। बस इतना–सा ही हेगेल आदि पण्डितों के संग विशेष अन्तर देखता हूँ।

चतुर्थ परिच्छेद

(ठाकुर श्रीरामकृष्ण और अवतारवाद)
(Reconciliation of free-will and predestination)

डॉक्टर कहते हैं, ईश्वर ने हमारी सृष्टि की है, और हमारी सबकी आत्मा (soul) अनन्त उन्नति करेगी। एक जन अन्य एक की अपेक्षा बड़ा है, यह बात वे मानना नहीं चाहते। तभी अवतार नहीं मानते।

डॉक्टर— Infinite progress (अनन्त उन्नति)! वह यदि न हो तो पाँच वर्ष, सात वर्ष और बचकर क्या होगा! गले में रस्सी लगा लूँगा!

''अवतार फिर और क्या है! जो मनुष्य हगता, मूतता है, उसके चरणों में नत होऊँगा? हाँ, किन्तु Reflection of God's light (ईश्वर की ज्योति) मनुष्य में प्रकाशित होकर रहती है, यह तो मानता हूँ।

गिरीश *(सहास्य)*— आपने God's light (ईश्वर की ज्योति) देखी नहीं!

डॉक्टर उत्तर देने के पहले थोड़ा इतस्तत: (इधर-उधर) कर रहे हैं। निकट एक मित्र बैठे थे, धीरे-धीरे कुछ कहा।

डॉक्टर— आपने वह तो प्रतिबिम्ब के अतिरिक्त कुछ नहीं देखा।

गिरीश— I see it! I see the light! (मैं इसे देखता हूँ! मैं प्रकाश देख रहा हूँ!) श्रीकृष्ण जो अवतार हैं, prove (प्रमाणित) करूँगा— वह न हो तो जीभ काट डालूँगा।

(विकार-रोगी का ही विचार होता है—
पूर्णज्ञान में विचार बन्द हो जाता है)

श्रीरामकृष्ण— ये जो समस्त बातें हुई हैं, यह कुछ भी नहीं है।

''वह तो विकार के रोगी का ख्याल मात्र है। विकार के रोगी ने कहा था— एक घड़ा जल पिऊँगा, एक हाण्डी भात खाऊँगा। वैद्य ने कहा, अच्छा! अच्छा! खा-पी लिओ। पथ्य खाकर जो कहेगा, तब किया जाएगा।

''जब तक घी कच्चा, तब तक ही कलकलानि (कलकल) सुनी जाती है। पक जाने पर फिर शब्द नहीं रहता। जिसका जैसा मन होता है, ईश्वर को उसी रूप में देखता है। मैंने देखा है, बड़े व्यक्ति के घर की छवियाँ— क्वीन (राणी) की छवि इत्यादि होती हैं। और फिर भक्त के घर की— देवताओं की छवियाँ।

''लक्ष्मण ने कहा था, राम! जो स्वयं वशिष्ठ ऋषि हैं, उनको भी फिर पुत्रशोक! राम ने कहा, भाई जिसको ज्ञान है, उसको अज्ञान भी है। जिसे

आलोक का बोध है, उसे अन्धकार का बोध भी है। जभी ज्ञान-अज्ञान के पार हो जाओ। ईश्वर को विशेष रूप से जान लेने पर वैसी अवस्था होती है। इसी का नाम है विज्ञान।

''पैर में काँटा चुभ जाने पर और एक काँटा खोज कर लाना चाहिए, लाकर काँटे को निकालना चाहिए। निकालने के पश्चात् दोनों ही काँटों को फेंक देते हैं। ज्ञान काँटे के द्वारा अज्ञान काँटा निकालकर ज्ञान-अज्ञान, दोनों काँटे ही फेंक देने चाहिएँ।

''पूर्णज्ञान का लक्षण है। विचार बन्द हो जाता है। जैसे मैंने कहा है, कच्चा रहने पर ही घी की कलकलानि रहती है।''

डॉक्टर— पूर्णज्ञान कहाँ रहता है? सब ईश्वर है! फिर तुम परमहंसगिरी क्यों करते हो? और ये लोग ही क्यों फिर आकर तुम्हारी सेवा करते हैं? चुप करके क्यों नहीं रहते?

श्रीरामकृष्ण *(सहास्य)*— जल स्थिर रहने पर भी जल है, हिलने-डुलने पर भी जल है, तरंग होने पर भी जल है।

(Voice of God or Conscience— महावत नारायण)

''और एक बात है। अथवा महावत नारायण की बात ही क्यों न सुनूँ? गुरु ने शिष्य को कह दिया था, सब नारायण हैं। पगला हाथी आ रहा था। शिष्य गुरु-वाक्य पर विश्वास करके वहाँ से हटा नहीं। (सोचा) हाथी भी नारायण हैं। महावत ने किन्तु चीत्कार करके कहा था, सब हट जाओ, सब हट जाओ। वह शिष्य नहीं हटा। हाथी उसे पटक कर चला गया। प्राण नहीं गया। मुख में जल डालते-डालते होश आ गया। जब पूछा कि क्यों तुम परे नहीं हटे, वह बोला, 'क्यों, गुरुदेव ने जो कहा है— सब नारायण हैं'! गुरु ने कहा, बेटा! महावत नारायण की बात तब क्यों नहीं सुनी? वे शुद्ध-मन, शुद्ध-बुद्धि बनकर भीतर हैं। मैं यन्त्र, वे यन्त्री। मैं घर, वे घरणी। वे ही महावत नारायण भी हैं'।''

डॉक्टर— और एक बात कहता हूँ। तब फिर क्यों कहते हो, इसे (गले की गुठली को) हटा दो?

श्रीरामकृष्ण— जब तक 'मैं'-घट है, तब तक इसी प्रकार होता है। कल्पना करो कि महासमुद्र है— नीचे से ऊपर तक परिपूर्ण। उसके भीतर एक घट है। घट के अन्दर-बाहर जल है। किन्तु घट बिना फूटे ठीक एकाकार नहीं होता। उन्होंने ही यह 'मैं'-घट रख दिया है।

(मैं कौन ?)

डॉक्टर— किन्तु यह 'मैं' जो कहते हो, ये सब क्या है? इसका तो अर्थ बताना होगा। वे क्या हमारे साथ चालाकी कर रहे हैं?

गिरीश— महाशय, आप ने कैसे जाना कि यह चालाकी नहीं है?

श्रीरामकृष्ण *(सहास्य)*— इस 'मैं' को उन्होंने ही रख दिया है। उनका खेल, उनकी लीला! एक राजा के चार बेटे हैं पर खेल कर रहे हैं— कोई मन्त्री, कोई कोतवाल बना है, ऐसे ही सब बनते हैं। राजा के बेटे होकर कोतवाल, कोतवाल खेल रहे हैं।

(डॉक्टर के प्रति)— ''सुनो! तुम्हारा यदि आत्मा का साक्षात्कार हो जाता है, तो फिर यह समस्त मानना पड़ता है। उनका दर्शन होने पर सब संशय चले जाते हैं।''

(Sonship and the Father— ज्ञानयोग और श्रीरामकृष्ण)

डॉक्टर— सब सन्देह कहाँ जाते हैं?

श्रीरामकृष्ण— मेरे पास से यहाँ तक सुन जाओ। उसके पश्चात् और अधिक कुछ सुनना चाहो, उनके निकट अकेले-अकेले कहो। उनसे जिज्ञासा करो— क्यों उन्होंने ऐसा किया हुआ है!

''लड़का भिखारी को एक कुनके* (पात्र) चावल दे सकता है। रेल-भाड़ा यदि देना हो तो मालिक को बताना पड़ता है।'' (डॉक्टर चुप हैं।)

''अच्छा, तुम विचार पसन्द करते हो। कुछ विचार करता हूँ, सुनो—

* कुनके = कुनिया= धान आदि नापने का बेंत आदि का बना पात्र।

ज्ञानी के मत में अवतार नहीं होता। कृष्ण ने अर्जुन से कहा था, तुम मुझे अवतार, अवतार कहते हो। तुम्हें एक वस्तु दिखाता हूँ, देखोगे? आओ। अर्जुन साथ-साथ गए। थोड़ी दूर जाकर अर्जुन से बोले, 'क्या देख रहे हो?' अर्जुन बोले, 'एक वृहत् वृक्ष, काले जामुन के गुच्छे के गुच्छे लगे हुए हैं।' श्रीकृष्ण ने कहा, 'वे काले जामुन नहीं है। थोड़ा-सा और आगे बढ़कर देखो।' तब अर्जुन ने देखा, 'गुच्छे के गुच्छे कृष्ण फले हुए हैं'। कृष्ण ने कहा, 'अब देख लिया? मेरे जैसे कितने कृष्ण फले हुए हैं'!

''कबीर दास ने श्रीकृष्ण की बात पर कहा था, तुमने गोपियों की ताली पर बन्दर-नाच किया था।

''जितना आगे बढ़ोगे भगवान की उतनी ही कम उपाधि देख पाओगे! भक्त ने प्रथम दर्शन किए दसभुजा। और आगे जाकर देखा छः भुजा (षड्भुज)। और भी आगे जाकर देखता है दो भुज (द्विभुज) गोपाल! जितना आगे बढ़ता है उतना ही ऐश्वर्य कम होता जाता है। और भी आगे जाने पर, तब ज्योति-दर्शन किया— कोई भी उपाधि नहीं।

''थोड़ा-सा वेदान्त का विचार सुनो। एक राजा के सामने कोई जादू दिखाने के लिए आया था। उसके (जादूगर के) थोड़ा-सा हट जाने पर राजा ने देखा, कोई सवार आ रहा है। घोड़े के ऊपर चढ़ा हुआ, खूब सजा-सँवरा— हाथ में अस्त्र-शस्त्र। सारी सभा के लोग और राजा विचार करते हैं, इसमें क्या सत्य है? घोड़ा तो सत्य नहीं, साज-शृंगार, अस्त्र-शस्त्र भी सत्य नहीं। अन्त में सचमुच देखा कि सवार अकेला खड़ा हुआ है। क्योंकि ब्रह्म सत्य, जगत मिथ्या— विचार करने लगने पर कुछ भी नहीं टिकता।''

डॉक्टर— इसमें मुझे आपत्ति नहीं।

(The world (संसार) and the scare-crow)

श्रीरामकृष्ण— किन्तु यह भ्रम सहज में नहीं जाता। ज्ञान के पश्चात् भी रहता है। स्वप्न में बाघ को देखा है, स्वप्न भंग हो गया, तब भी छाती दुड़-दुड़ (धक्-धक्) करती है!

''खेत में चोरी करने के लिए चोर आए। फूस की छवि मनुष्य के आकार की बनाकर रख दी गई थी— डर दिखाने के लिए। चोर किसी तरह भी घुस नहीं पा रहे। एक व्यक्ति ने निकट जाकर देखा— फूस का पुतला है। आकर उन्हें बता दिया— भय नहीं। किन्तु वे आना नहीं चाहते— कहते हैं छाती दुड़-दुड़ कर रही है! तब पुतले को धरती पर लिटा दिया, और कहने लगा, यह कुछ नहीं है, यह कुछ नहीं है, 'नेति-नेति'।''

डॉक्टर— ये सब तो सुन्दर बातें हैं।

श्रीरामकृष्ण *(सहास्य)*— हाँ! कैसी बात?

डॉक्टर— सुन्दर।

श्रीरामकृष्ण— एक 'Thank you' (थैंक यू) तो दो।

डॉक्टर— तुम क्या मन का भाव नहीं समझते? और कितना कष्ट करके तुम्हें यहाँ देखने आता हूँ!

श्रीरामकृष्ण *(सहास्य)*— नहीं जी, मूर्ख के लिए कुछ बोलो। विभीषण लंका का राजा नहीं बनना चाहता था। वह बोले, राम! तुम्हें पा लिया है तो अब राज्य लेकर क्या होगा! राम बोले, विभीषण! तुम मूर्खों के लिए राजा होओ। जो कहते हैं, तुमने राम की इतनी सेवा की है, तुम्हारा क्या ऐश्वर्य हुआ? उनकी शिक्षा के लिए राजा होओ।

डॉक्टर— यहाँ पर वैसे मूर्ख कहाँ है?

श्रीरामकृष्ण *(सहास्य)*— नहीं जी, शंख भी हैं और घोंघी-घोंघा भी हैं। *(सब का हास्य)*।

पञ्चम परिच्छेद

(पुरुष-प्रकृति— अधिकारी)

डॉक्टर ने ठाकुर के लिए औषध दी— दो ही globule (गोलियाँ); कहते हैं, ये दोनों ही गोलियाँ देता हूँ— पुरुष और प्रकृति। *(सबका हास्य)*।

श्रीरामकृष्ण *(सहास्य)*— हाँ, वे एक साथ ही रहते हैं। कबूतरों को देखा नहीं, अन्तर पर रह नहीं सकते। जहाँ पर ही पुरुष है, वहाँ पर ही प्रकृति है; जहाँ पर ही प्रकृति है, वहाँ पर ही पुरुष है।

आज विजया है। ठाकुर ने डॉक्टर को मीठा मुख (मिष्टमुख) करने के लिए कहा। भक्तों ने (मिष्टान्न) लाकर दिया।

डॉक्टर *(खाते-खाते)*— खाद्य के लिए 'Thank you' (थैंक यू) देता हूँ। तुमने जो ऐसा उपदेश दिया है, उसके लिए नहीं। वह 'Thank you' मुख से क्यों कहूँ?

श्रीरामकृष्ण *(सहास्य)*— उन पर मन रखना। और क्या कहूँ! और थोड़ा-थोड़ा-सा ध्यान करना। (छोटे नरेन को दिखला कर) देखो, देखो, इसका मन ईश्वर में एकदम लीन हो जाता है। जो सारी बातें तुमसे कही थीं—

डॉक्टर— इन लोगों को सब बताओ।

श्रीरामकृष्ण— जिसके पेट में जो सहन हो! वैसी समस्त बातें क्या सब ही ले सकते हैं? तुमसे कहीं हैं। एक बात है— माँ घर में माछ लाई हैं। सबका पेट समान नहीं है। किसी के लिए पुलाव बना दिया, किसी के लिए मछली का झोल। पेट ठीक नहीं है। *(सबका हास्य)*।

डॉक्टर चले गए। आज विजया है। सब भक्तों ने ठाकुर श्रीरामकृष्ण को साष्टांग प्रणिपात करके उनकी पदधूलि ग्रहण की। तत्पश्चात् परस्पर कोलाकुलि (आलिंगन) करने लगे। आनन्द की सीमा नहीं। ठाकुर का इतना असुख! सब भुला दिया है। प्रेमालिंगन और मिष्टमुख बहुत देर तक हुआ। ठाकुर के पास छोटे नरेन, मास्टर तथा और भी दो-चार भक्त बैठे हैं। ठाकुर आनन्द में बातें कर रहे हैं। डॉक्टर की बात हुई।

श्रीरामकृष्ण— डॉक्टर को और अधिक कुछ नहीं कहना होगा।

''वृक्ष का काटना शेष होने लगने पर जो व्यक्ति काटता है, वह थोड़ा हटकर खड़ा हो जाता है। थोड़े-से समय के पश्चात् वृक्ष अपने-आप ही गिर जाता है।''

छोटे नरेन *(सहास्य)*— सब ही principle (सिद्धान्त) हैं!

श्रीरामकृष्ण *(मास्टर से)*— डॉक्टर बहुत बदल गया है ना!

मास्टर— जी हाँ! यहाँ आने पर हतबुद्धि हो जाते हैं। 'क्या औषध देनी होगी', यह बात बिलकुल ही नहीं उठाते। हमारे याद करवाने पर तब कहते हैं, 'हाँ, हाँ औषध देनी होगी'।

बैठक में भक्तों में से कोई-कोई गाना गा रहे थे।

ठाकुर जिस कमरे में हैं, उनके (भक्तों के) लौटकर उसी कमरे में आने पर ठाकुर कहते हैं, ''तुम लोग गाना गा रहे थे, ठीक क्यों नहीं हुआ? कौन-सा एक व्यक्ति बेतालसिद्ध था— यह भी वैसा ही!'' *(सब का हास्य)*।

छोटे नरेन का रिश्तेदार लड़का आया है। खूब सजा-संवरा और आँखों पर ऐनक। ठाकुर छोटे नरेन के साथ बातें कर रहे हैं।

श्रीरामकृष्ण— देख, इसी रास्ते में एक लड़का जा रहा था, प्लेटों वाला कुरता पहने। चलने का जो ढंग! एक-एक बार प्लेटों को सामने रखकर वहाँ पर से चादर हटा देता— और फिर इधर-उधर देखता, 'कोई देख रहा है कि नहीं'। चलते समय कमर टेढ़ी। *(सबका हास्य)*। एक बार देखियो तो!

''मोर पंख दिखाता है। किन्तु पैर बड़े गँदे! *(सबका हास्य)*। ऊँट बड़ा कुत्सित, उसका सब कुछ ही कुत्सित।''

नरेन का रिश्तेदार— किन्तु आचरण अच्छा है।

श्रीरामकृष्ण— अच्छा तो! किन्तु काँटेदार घास खाता है— मुख से रक्त गिरता है, तब भी खाता है! संसारी अभी-अभी लड़का मरता है और फिर लड़का-लड़का करता है!